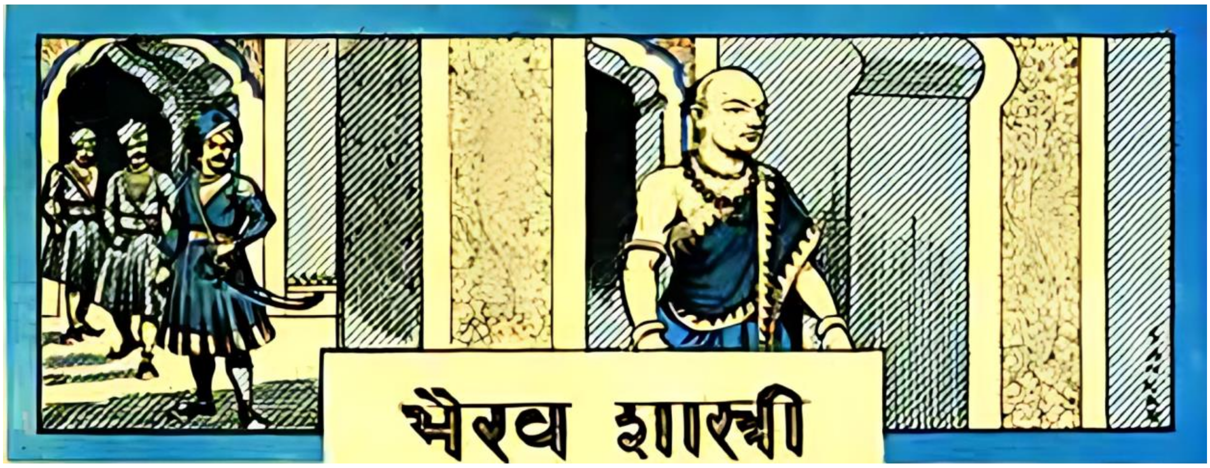
# चन्दामामा

माँ - बच्चों मासिक पत्र






किसी जमाने में कलिङ्ग देश का राजा मणिभद्र था। उसका मन्त्री, इन्दुशर्मा बहुत बुद्धिमान था। क्योंकि राजा के नौकर, व कर्मचारी सब इन्दुशर्मा के आधीन थे; इसलिए राजकार्य निर्विघ्न चलता रहा।

राजा का मनोरञ्जन करने के लिए भैरव शास्त्री नाम का एक व्यक्ति नियुक्त था। राजा जब विश्राम कर रहा होता, वह उसके पास जाता और उसका मनोरञ्जन करता और चला जाता।

सिवाय राजा के, भैरव शास्त्री का किसी और से कोई काम न था। इसलिये वह किसी और की कोई परवाह न करता। उसका ख्याल था कि जब तक राजा उसके अनुकूल था उसके लिए किसी और को कुछ मानना आवश्यक न था। आखिर वह मन्त्री से भी ऊँटपटाँग व्यवहार करने लगा। यह देख मन्त्री को गुस्सा आया। उसने भैरव शास्त्री को सबक सिखाना चाहा। राजमहल की ड्योढ़ी के पहरेदार को बुलाकर उसने कहा-"कल से भैरव शास्त्री को अन्दर न आने दो।" अगले दिन जब भैरव शास्त्री राजा का दर्शन करने के लिए आ रहा था तो पहरेदार ने कहा-"आप अन्दर नहीं जा सकते हैं। हुक्म हुआ है कि आपको अन्दर न जाने दिया जाय।"

भैरव शास्त्री को अचरज हुआ। उसने सोचा कि शायद कहीं कोई गलती हो गई होगी। पिछले दिन भी राजा ने उससे अच्छी तरह बातचीत की थी। इतने में क्या हुआ होगा, वह न जान सका।

"महाराज! मुझे क्यों दण्ड मिला है? कृपया बताइये कि मुझसे क्या

अपराध हुआ है? मैं गलती सुधार लूँगा।" इस प्रकार की एक चिट्ठी लिखकर भैरव शास्त्री ने अन्दर भेजी।

यह चिट्ठी मन्त्री के पास पहुँची और फिर रद्दी की टोकरी में डाल दी गई। जब दो दिन तक भैरव शास्त्री न आया, तो राजा ने अपने सेवकों से पूछा-"आजकल भैरव शास्त्री नहीं दिखाई दे रहा है। क्या बात है?"

जिस किसी से भी उसने पूछा, उसने कहा कि उसे न मालूम था। यह प्रश्न मन्त्री के पास भी गया। उसने आकर राजा से कहा- "महाप्रभु, भैरव शास्त्री घायल हो गया। कल रात ही वह मरा है। उसकी अन्त्येष्टि क्रिया अभी करवाकर आ रहा हूँ।"

जब राजा के पास से कोई जवाब न आया तो भैरव शास्त्री समझ गया कि उसकी चिट्ठी राजा के पास पहुँची ही न होगी। "राजमहल में मेरा कोई मित्र नहीं है। राजा जब बाहर आयेगा, तब सीधे उससे जाकर मिलूँगा।" यह सोचकर भैरव शास्त्री मौके की प्रतीक्षा में रहने लगा।

एक दिन शाम को राजा, मन्त्री, और दरबारी, घोड़ों पर सवार होकर टहलने



निकले। भैरव शास्त्री को कुछ दूरी पर देखकर राजा को आश्चर्य हुआ।

मन्त्री ने बिना हिचकिचाये कहा- "जी हाँ, भैरव शास्त्री भूत बन गया है।" दूसरों ने भी मन्त्री की हाँ में हाँ मिलाई। "हाँ महाराज, जो वह दीख पड़ रहा है, वह भैरव शास्त्री का भूत ही है।"

ये बातें भैरव शास्त्री को भी सुनाई दीं। उसे तब अपनी गलती समझ में आई। उसने एक कागज पर एक श्लोक लिखा और जब राजा वापस जा रहा था, तो वह उसके हाथ में रख दिया।

राजा ने कागज खोलकर यों पढ़ा।

राष्ट्रसेव्यो नृपः सेव्यः

न सेव्यः केवलो नृपः

राष्ट्र व प्रभावेन

भैरवो भूततो गतः

(राजा के साथ उसके दरबारियों की भी सेवा करनी चाहिये। केवल राजा की सेवा मत करो। क्योंकि दरबारियों की कृपा न थी, इसलिए भैरव, जीते जी, भूत बन गया।)

राजा को सारी स्थिति समझ में आ गई। उसने अपने मन्त्री से पूछा- "क्या आपने झूठ कहा था कि भैरव शास्त्री मर गया है और भूत बन गया है?"

मन्त्री ने जो कुछ गुजरा था, वह सच सच बता दिया। एक विदूषक के लिए राजा एक समर्थ मन्त्री को नहीं खो सकता था। इसलिए राजा ने मन्त्री से कुछ न कहा। सिर्फ इतना ही कहा कि भैरव शास्त्री को फिर से नौकरी दे दी जाये। भैरव शास्त्री भी, इस बार मन्त्री व अन्य अधिकारियों को मान-मर्यादा से देखता राजा की सेवा करने लगा।






[१६]

[ हसनगौरी के साथ पिङ्गल इपों के किले के पास गया। जब उसने फाटक खोलना चाहा तो उसके पीछे रखा बारूद फूट पड़ा। कुछ सैनिक घायल हुए, फिर रेगिस्तान का डाकू "गिद्ध" पहाड़ों में दिखाई दिया। वहाँ युद्ध हुआ। उसी समय पिङ्गल को अकस्मात मान्त्रिक पद्मपाद दिखई दिया। बाद में...]

पिङ्गल ने कभी कल्पना भी न की थी कि वह महामान्त्रिक पद्मपाद को फिर कभी देखेगा। उस हालत में पद्मपाद का यकायक दीखना और वह भी अवन्तीनगर से हजारों मील दूर, पहाड़, जङ्गलों में, पिङ्गल के लिए बहुत आश्चर्यजनक था। परन्तु तुरन्त उसका आश्चर्य, सन्देह में परिवर्तित हो गया और वह हसनगौरी की ओर देखने लगा।

हसनगौरी के मुँह पर भी सन्देह झलक रहा था। उसने पिङ्गल को, कन्धा पकड़कर पास खींचा। उसने धीमे से पूछा-"पिङ्गल! कौन है यह पद्मपाद? कहीं रेगिस्तान का ड़ाकू 'गिद्ध' यही तो नहीं है?"

पिङ्गल कुछ कहनेवाला था कि पद्मपाद उसके पास आया। हसनगौरी की ओर ईशारा करके उसने पूछा-"यह कौन है



पिङ्गल?" इस प्रश्न के कारण पिङ्गल चकरा गया। उसका अचरज करता देख और उसका कारण समझ, मुस्कराते हुए पद्मपाद ने पूछा-"लगता है, तुम मुझे देखकर कुछ सन्देह कर रहे हो। क्यों?"

पिङ्गल को न सूझा कि क्या जबाब दे। उसकी नजर पद्मपाद से हटकर हसनगौरी की ओर गई। उसने पद्मपाद की ओर एक कदम आगे बढ़ाकर कहा-"आप कौन हैं? मैं नहीं जानता।" वह कहता कहता सहसा रुक गया। उसके आश्चर्य की सीमा न थी।

इस बार पद्मपाद ने जोर से अट्टहास किया। वह पिङ्गल के पास गया। उसके कन्धों को प्रेम से थपथपाते हुए उसने पूछा-"कहीं तुम दोनों को यह सन्देह तो नहीं हो रहा है कि इस जङ्गल से भागे हुए चोर डाकुओं का सरदार मैं ही हूँ! बताओ।"

"नहीं, पद्मपाद!" हसनगौरी को दिखाते हुए पिङ्गल ने कहा-"ये नवाब की ऊँटों की पल्टन के सरदार हसनगौरी "गिद्ध" नाम के ड़ाकू के लिए ये सब प्रान्त बहुत दिनों से छान रहे हैं।"

पद्मपाद ने यह सुनते ही हसनगौरी की ओर मुड़कर कहा-"हुज़र, यदि आप रेगिस्तान के रक्षक सैनिकों के सरदार ही हों तो आपकी रक्षा की प्रतीक्षा करते कुछ व्यापारी उस गुफा में बँधे पड़े हैं। उनकी सहायता कीजिए।"

हसनगौरी को तब भी पद्मपाद पर विश्वास न हुआ। यह देख पिङ्गल ने उससे कहा-"आप पद्मपाद को मेरे पास छोड़ दीजिये। आप को घबराने की जरूरत नहीं है। इनसे सब

कुछ मैं मालूम कर लेता हूँ। अगर ये ही ड़ाकुओं के सरदार "गिद्ध" हो तो मैं इनको, हाथ-पैर बाँधकर आपको सौंप सकता हूँ।"

पिङ्गल की इन बातों ने हसनगौरी का सन्देह दूर कर दिया। वह कुछ सैनिकों को साथ लेकर पद्मपाद की दिखाई हुई गुफा की ओर गया।

"पिङ्गल, इस उजाड़ रेगिस्तान में, पहाड़-जङ्गलों में हम दोनों का इस प्रकार मिलना देखकर मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा है। अवन्तीनगर में अपना घर बार छोड़कर तेरा इतना दूर आना क्यों हुआ?" पद्मपाद ने पूछा।

"पद्मपाद! मेरी बहुत ही दयनीय कहानी है। आपकी दी हुई जादू की थैली, धन राशि और भल्लूककेतु, जो सब बातों में मेरी सहायता कर रहा था, मैं खो बैठा। मेरे कष्टों के कारण मेरे दुष्ट धूर्त भाई ही हैं। आपको छोड़कर अपने घर पहुँचने के बाद से आज तक जितनी मुसीबतें मैंने झेली हैं, अगर मैं सुनाने लगू तो बहुत समय लगेगा। पहले आप यह बताइये कि आप इस इलाके में क्यों आये। अगर किसी और जादूगर को जीतना



चाहते हैं तो मैं फिर आपकी सहायता कर सकता हूँ।" पिङ्गल ने धीमे-धीमे कहा।

पिङ्गल की आखिरी बात से पद्मपाद को सन्तोष तो हुआ, परन्तु पहले की बात; जादू की थैली का खो जाना सुनकर उसे बहुत दुःख हुआ।

आज तक पद्मपाद वह सहायता न भूल पाया था, जो पिङ्गल ने भल्लूकपर्वत के पास महामायावी को जीतने के लिए दी थी। उसे सब कुछ याद था।



डाल दिया।" पद्मपाद ने पिङ्गल का सन्देह निवारण करते हुए कहा।

पिङ्गल को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने सन्देहपूर्ण दृष्टि से पद्मपाद के मुँह पर देखा-"पद्मपाद! आप जैसे महामान्त्रिक भी इन रेगिस्तान के डाकुओं को लोगों को इस तरह लूटता देख कैसे युँहि रह सके!" पिङ्गल ने पूछा।

पद्मपाद मुस्कराया। "पिङ्गल! जब मैं उन व्यापारियों के काफिले के साथ निकला था तब मैंने कहा था कि मैं केवल यात्री ही हूँ। अगर मैं कहता कि मैं फलाना जादूगर हूँ तो वे मुझे काफिले के साथ आने ही न देते। इसलिए डाकू जब उन्हें लूट रहे थे मैंने अपनी मन्त्र शक्ति का उपयोग नहीं किया। मैं इन पत्थरों के पीछे छुप गया क्योंकि मैं उनको यह न जानने देना चाहता था कि में जादूगर हूँ।" पद्मपाद ने कहा।

"पद्मपाद! तुम्हारे व्यवहार पर मुझे आश्चर्य हो रहा है।" पिङ्गल ने कहा। "भूगोल, अंगूठी, बज्रों से जड़ी तलवार, इन

"पिङ्गल! में किसी और जादूगर को जीतने के लिए इस प्रान्त में नहीं आया हूँ। जब तक मेरे पास महामायावी की समाधी से लाई हुई अपूर्व शक्तिवाली चीजें हैं, तब तक मुझे इस संसार में किसी से डरने की जरूरत नहीं है। मैं केवल देश व तीर्थ देखने के लिए ही निकला हूँ। इसी कारण साधारण यात्री के वेश में एक व्यापारियों के काफिले के साथ इस प्रान्त में पहुँचा। आज शाम को ही कुछ ड़ाकुओं ने उनके काफिले पर हमला किया, उनकी कीनती चीज़ों को लूट लिया और व्यापारियों को बाँधकर उस गुफा में

अद्‌भुत चीज़ों में से एक की ही मदद से आप जिस जगह को देखना चाहते, उसको क्षण-भर में देख सकते थे न? उस स्थिति में यात्रा के कष्ट व प्रयास को सहते इस व्यापारियों के काफिले के साथ क्यों निकले?"

"क्या तुम अब भी यह सन्देह कर रहे हो कि मैं डाकुओं का सरदार 'गिद्ध' हूँ?" पद्मपाद ने आश्चर्य करते हुए, पिङ्गल की ओर देखा। "देश, विदेश में घूमकर पुण्य क्षेत्रों का दर्शन कर यदि मुझे पुण्य कमाना है तो मुझे भी पैदल जाना होगा। इन अद्‌भुत चीजों की सहायता से अगर मैं एक क्षण में किसी तीर्थ में पहुँच भी गया तो मुझे पुण्य न मिलेगा।" पद्मवाद ने पिङ्गल की ओर एकटक देखते हुए कहा।

ये इस तरह बातें कर रहे थे और उधर हसनगौरी के सैनिकों के चिल्लाने के कारण, व्यापारियों के रोते धोने के कारण इतना शोर हो रहा था कि कान फटे जाते थे, वह सारा इलाका गूँज रहा था। पिङ्गल, और पद्मपाद अपना सम्भाषण रोककर उस तरफ देखने लगे।



उसी समय एक सैनिक भागा-भागा हाँफता हाँफता पिङ्गल के पास आया।

"गिद्ध का पीछा कर, उसको पकड़ने के लिए सरदार आपकी मदद चाहते हैं।" उसने कहा।

पिङ्गल ने पद्मपाद की ओर देखकर कहा-"पद्मपाद! हसनगौरी ने इस रेगिस्तान में भूख-प्यास से मरने से मेरी रक्षा की। मैं इसके बदले में उसकी कोई न कोई सहायता करना चाहता हूँ। इस अन्धकार में उन रेगिस्तान के ड़ाकुओं को पकड़ना किसी मनुष्य के बस की बात

नहीं है। वे रेगिस्तान के डाकू और उनका सरदार "गिद्ध" बहुत क्रूर हैं। पासवाले किले में उन्होने सब को मार दिया है। धोखे से हमें भी मारना चाहते थे। इसलिये आप इन रेगिस्तान के ड़ाकुओं को पकड़ने के लिए, अपनी आश्चर्यजनक शक्तियों का उपयोग कर हमारी मदद कीजिये। इस तरह इस इलाके में यात्रा करनेवाले यात्रियों व व्यापारियों की रक्षा कीजिये।"

"पिङ्गल! क्यों कि तुम सहायता माँग रहे हो, इसलिये करूँगा। परन्तु ऐसा करने से व्यापारी जान जायेंगे कि मैं मान्त्रिक हूँ।इसके बाद मेरा उनके साथ जाना असम्भव हो जायेगा। खैर, पुण्य-क्षेत्रों को जाने के लिए तो कितने ही रास्ते हैं।" यह कहकर पद्मपाद ने वहाँ पड़े हुए एक पत्थर को उठाया और अपने हाथ की तलवार से उसके छोटे-छोटे टुकड़े करने लगा।

पद्मपाद को यह करता देख पिङ्गल को बहुत अचरज हुआ। उसने पद्मपाद का कन्धा पकड़कर पूछा- "पद्मपाद! आप क्या कर रहे हैं? उस तरफ रेगिस्तान के डाकू व्यापारियों का माल लेकर भाग रहे



हैं न? पहले उनको मारने का कोई रास्ता निकालिये।"

पद्मपाद ने हँसते हुए हाथ में कुछ पत्थर के टुकड़े लिये और उन्हें पिङ्गल को दिखाते हुए कहा-"तुम्ही ने तो कहा था कि इस अन्धकार में इन चोरों का पीछा करना किसी मनुष्य के लिए सम्भव नहीं है? इसलिए मैं अन्धकार में देखनेवाले भेड़ियों और शेरों को उनका पीछा करने के लिए भेजता हूँ। इस हथेली में रखे बड़े पत्थर के टुकड़े शेर हैं और छोटे भेड़िये।" कहते हुए उन पत्थरों पर उसने मन्त्र फूँका और जोर से चारों तरफ फेंक दिया।

देखते-देखते उन पत्थरों में से भयङ्कर गर्जन करते हुए भेड़िये और बब्बर शेर बाहर निकले। पत्थरों पर से कूदते हुए के चारों तरफ भाग निकले।

यह विचित्र दृश्य देखकर पिङ्गल हक्का-वक्का रह गया। यह देख ही रहा था कि हसनगौरी के छुड़ाये हुए व्यापारी झुण्ड बनाकर पद्मपाद के पास आये। उनके साथ आते हुए हसनगौरी ने हाथों को हवा में हिलाते हुए कहा-"पिङ्गल!



यह क्या आश्चर्य है? इन पहाड़ों में मैंने कभी भी किसी भूले भटके भेड़िये को न देखा था। न शेर ही कभी देखा था अब....!" वह पिङ्गल की ओर देखता देखता यकायक रुक गया।

"पद्मपाद! अब आपके भेद को गुप्त रखने से कोई फायदा नहीं। इसलिए क्या में इन सबको सभी बात बता दूँ।" पिङ्गल ने पूछा। उसने उसकी अनुमति चाही।

पद्मपाद ने स्वीकृति की सूचना में सिर हिलाया। अपने कपड़ों में रखी अंगूठी बाहर निकालकर उसने वहाँ एक ऊँची चट्टान पर रखी। तुरन्त उस सारे प्रदेश में इतनी कान्ति हुई कि आँखें चौंधियाने लगी, मानो दुपहर हो गई हो।

पिङ्गल ने दो-तीन शब्दों में, वहाँ उपस्थित व्यक्तियों से कहा कि पद्मपाद महान मन्त्रवेता था। उसने हसनगौरी की ओर मुड़कर कहा- "इस रेगिस्तान के डाकू "गिद्ध" के बारे में आपको कोई चिन्ता करने की जरूरत नहीं। पद्मपाद के भेजे हुए भेड़िये और शेर उसका और उसके साथियों को यहाँ तक खींचकर ला सकते हैं।"

पिङ्गल ने अभी कहना खतम न किया था कि घाटियों में हाहाकार सुनाई पड़ने लगा। उसके साथ भेड़ियों का चीत्कार और शेरों का गर्जन भी सुनाई दिया।

सैकड़ों रेगिस्तान के ड़ाकुओं को क्रूर-पशुओं ने चारों तरफ़ से घेर लिया। जान बचाकर भागने के लिए उन्हें कोई रास्ता न दिखाई। दिया। आखिर वे पद्मपाद और पिङ्गल की और चीखते-चिल्लाते भागकर आने लगे।

(अभी और है)






(गताङ्क से आगे)

सुलतान कुछ देर तक अपने वजीर को न पहिचान सका। फिर उसने आश्चर्य से पूछा-"किसने तेरी यह हालत की है?"

"हुजूर! मैं एक अच्छी रसोई करनेवाली को खरीदने के लिए बाज़ार गया। वहाँ एक बहुत सुन्दर गुलाम बिक रही थी। यह मालूम हुआ कि अली फ़दल का लड़का अली नूर उसे बेच रहा था। आपने कभी दस हज़ार दीनार लगाकर अली फ़दल को एक गुलाम स्त्री को खरीदने के लिए कहा था। वह गुलाम ही यह स्त्री थी। अली फ़दल ने उस गुलाम को आपको न देकर अपने लड़के को दिया। वह हाल में अपनी सब ज़मीन-जायदाद बरबाद करके भिखारी हो गया है। इसलिए उसने उस गुलाम स्त्री को बेचने की सोची। उसको चार हजार दीनारों में बिकता देख मैंने उसे खरीद लिया ताकि मैं उसे आपको समर्पित कर दूँ। तब देखिये उसने क्या किया? मैंने उसे मनाते हुए कहा भी-"भाई, इसे मैं अपने लिए नहीं खरीद रहा हूँ। सुल्तान के लिए खरीद रहा हूँ।" यह सुनकर वह जल उठा। मुझे घोड़े से नीचे खींचा। लोगों के सामने उसने मुझे खूब पीटा। क्या हिम्मत है उसकी? कितना घमण्ड?"

सुल्तान का मुहँ गुस्से से लाल हो गया। उसने अपने सैनिकों के सरदार को बुलाकर कहा-"तुम चालीस आदमी लेकर जाओ। अली फ़दल का घर नष्ट कर दो। नीच अलीनूर और उसकी गुलाम स्त्री को हाथ बाँधकर लाओ।"



सौभाग्य की बात थी, राज-महल के रक्षकों में एक ऐसा आदमी था जो अली फदल के यहाँ बहुत दिनों तक नौकर था। वह अलीनूर का हमउम्र था। इसलिए वह सुल्तान का हुक्म सुनते ही पगडण्डियों से होता हुआ, भागता भागता अलीनूर के घर पहुँचा। "बाबू, आप घर छोड़कर तुरन्त कहीं चले जाइये। नहीं तो आपकी जान नहीं बचेगी।" उसने सारी बात बता दी। अलीनूर ने प्रियसखी को सफर के लिए तैयार किया। राजमहल के रक्षक ने अलीनूर के हाथ में चालीस दीनारें रखते हुए कहा-"मेरे पास इससे अधिक नहीं हैं। यह धन लेकर आप दोनों अपने प्राण बचाइये।"

अलीनूर और प्रियसखी पिछवाड़े के दरवाजे से बाहर निकले और गलियों से होते हुए समुद्र के किनारे बन्दरगाह पहुँचे।

तब सौभाग्य से एक नौका बागदाद शहर जा रही थी। "मुसाफिरो को चढ़ जाना चाहिये। अब अधिक समय नहीं है।" कप्तान कह रहा था।

दोनों बिना झिझके उस नौका पर चढ़ गये। नौका बागदाद की ओर चल पड़ी।

अलीनूर के घर छोड़ने के कुछ देर बाद सुल्तान के भेजे हुए चालीस सैनिकों ने उसके घर पर धावा किया। जो कुछ वहाँ दिखाई दिया उसे नष्ट कर दिया। मकान को मिट्टी में मिला दिया। परन्तु न अलीनूर का ही पता लगा न उसकी गुलाम स्त्री का ही।

यह जानकर सुल्तान ने सारे बसरा शहर में उनकी खोज करवाई। उसने वज़ीर सानवी को बुलाकर कहा-"तुम शोक न करो। तुम्हारे अपमान का बदला लेकर रहूँगा।" उसने यह वचन दिया।

वज़ीर सानवी ने सुल्तान को आशीर्वाद दिया कि उसके पुत्र-पौत्रों की वृद्धि हो। उसने शहर में घोषणा करवा दी-"अलीनूर को जो पकड़ कर देगा उसे हजार दीनार ईनाम! किसी ने अगर उसको पनाह दी तो उसका सिर काट दिया जायेगा।" उन्होंने बहुत कोशिश की पर कोई फायदा नहीं हुआ। अलीनूर का ठिकाना कोई न बता सका।

कुछ समय बाद अलीनूर की नौका बगदाद पहुँची। कप्तान ने अलीनूर से कहा-"हुजूर, यही बगदाद शहर है। इस भूमि का यह स्वर्ग है। आपको यही उतरना है।"

पाँच दीनारें किराया देकर अलीनूर प्रियसखी को लेकर नौका से उतरा। संयोग से वे बगदाद बड़े रास्ते से न गये। वे एक और रास्ते से पहुँचे, वह रास्ता उनको बगदाद शहर के बाहर के बाग बगीचों में ले गया। वे एक बगीचे में पहुँचे। यह खलीफा का बगीचा था। उसके चारों ओर ऊँची चार दिवारी थी। ड्योढ़ी पर रङ्ग बिरङ्गी बतियाँ थीं। फाटक के बाहर लोगों के बैठने के लिए तख्त रखे हुए थे। फाटक बन्द था। उसके पास ही फव्वारा था।



"यह बहुत अच्छी जगह है। यहाँ तख्त पर आओ, कुछ देर विश्राम करें।" अलीनूर ने प्रियसखी से कहा।

उन दोनों ने फव्वारे में हाथ मुँह धोये, और लकड़ी के तख्तों पर पीठ सीधी की। भीनी भीनी हवा मानों लोरियों गा रही थी। वे अपने कपड़ों को मुँह पर ड़ालकर सो गये।

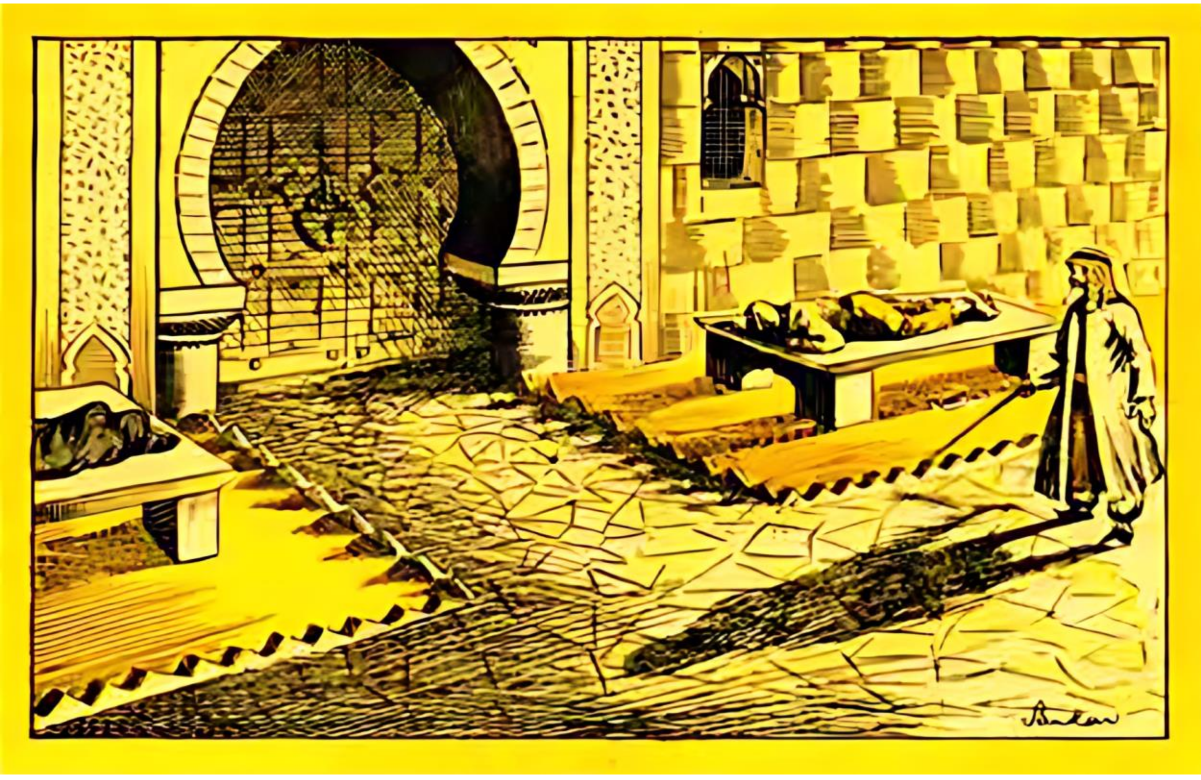
जिस बाग में वे दोनों पहुँचे थे, उसका नाम आनन्दोद्यान था। उसमें एक महल

था। उसका नाम चित्र महल था। जब खलीफा का दिल उचट जाता तब वह यहाँ आकर रहता था। और सब कुछ भूल जाता था। महल में एक ही एक कमरा था। उसमें पैंतालीस खिड़कियाँ थी। एक एक खिड़की में एक एक बत्ती लटक रही थी। महल के मध्य में सोने का बड़ा दीप था। खलीफा जब आता तभी वह महल खोला जाता और बत्तियाँ जलाई जातीं। महल के बीचों-बीच एक आसन था। उस पर आराम से बैठकर खलीफा, नृत्य-गान मनोरञ्जन का आनन्द लेता। खलीफा का दरबारी गायक, अपने गायन से खास तौर पर उनका जी बहलाया करता।

इस बाग और महल की रखवाली करने के लिए इब्राहीम नाम का एक वृद्ध व्यक्ति नियुक्त था। इब्राहीम का काम यह था कि किसी को बाग में घूमने फिरने न दे।

आज जब वह सारे बाग का चक्कर लगाकर देखकर आ रहा था तो फाटक के पास तख्तों पर उसने दो व्यक्तियों को लेटे देखा।

"अरे, क्या हिम्मत है इन लोगों की! क्या यह सोच रहे हैं कि खलीफा ने मुझे



यहाँ यूँहि रख रखा है? जो तख्त खलीफा के कर्मचारियों के लिए निश्चित हैं, उन पर ये निश्चिन्त सो रहे हैं।" यह सोच वह लट्ठ लेकर उनके पास आया। पर इतने में उसकी आत्मा ने कहा-"अरे भाई इब्राहीम, यह क्या कर रहे हो? तुम्हे तो यह भी नहीं मालूम कि वे कौन हैं। हो सकता है कि वे अल्लाह के भेजे हुए मेहमान हों! या बिचारे भिखारी हो।" सोचते हुए इब्राहीम ने उनके मुँह पर पड़ा कपड़ा हटाया। वह उनका सौन्दर्य देखकर हैरान रह गया।

उसका गुस्सा, पछतावे में बदल गया । वह अलीनूर के पैरों के पास बैठकर उसके पैर दबाने लगा। उसे पैर दबाता देख, अलनूर झट उठकर बैठ गया। यह देख कि उसके पैर दबानेवाला वृद्ध था उसने तुरन्त इब्राहीम का हाथ लेकर अपनी आँखों पर लगा लिया।

"आप दोनों कहाँ के हैं?" इब्राहीम ने पूछा।

"परदेशी हैं।" अलीनूर ने कहा।

"अल्लाह का कहना है कि मेहमानों की आवभगत करनी चाहिये। आइये,





मेरा बाग, महल, आदि, देखिये।" इब्राहीम ने कहा।

"क्या यह सब आपकी सम्पत्ति है?" अलीनूर ने आश्चर्य करते हुए पूछा।

इब्राहीम ने सोचा कि यदि उसने खलीफा का नाम लिया तो वह डर डरा जायेगा, इसलिए उसने कहा- "हाँ, यह सब मेरा है।"

प्रियसखी भी उठी। दोनों इब्राहीम के साथ अन्दर गये। अलीनूर ने बसरा में बहुत से बगीचे देखे थे, परन्तु उसने कभी स्वप्न में भी कल्पना न की थी कि इतना सुन्दर बाग भी हो सकता है। फाटक के बाद रास्ते भर तोरण-से लगे हुए थे। उन पर अंगूरो की बेलें लटक रही थीं। उन पर हरे काले अंगूर थे। फलों के वृक्ष थे। उन पर तरह तरह के पक्षी बैठे चहचहा रहे थे। बगीचे के फूलों के बारे में तो कहना ही क्या? कोई ऐसा फूल न था, जो वहाँ न हो।

इब्राहीम अपने अतिथियों को बगीचा दिखाकर उनको महल में ले गया। अन्दर पैर रखते ही उन दोनों की आँखें चौंधिया गयीं। उन्हें ऐसा लगा जैसे संसार में उस जैसा सुन्दर महल कहीं न हो। उसे देखने के लिए उनको बहुत समय लगा। आखिर अलीनूर ने एक खिड़की से झाँक कर बाहर का बगीचा देखा। बाहर चान्दनी खिल रही थी। वह अपने सारे कष्ट भूल गया।

इब्राहीम ने उन्हें खाना लाकर दिया। अलीनूर ने उससे कहा- "भोजन के साथ पेय भी तो दिये जाते हैं, यहाँ तो कोई पेय नहीं है। क्यों?"

इब्राहीम जाकर एक लोटे में पानी ले आया। अलीनूर ने हँसकर कहा-"मैंने जो पेय माँगा था वह यह नहीं है।"

"लगता है आप अंगूरी शराब चाहते हो? मैं तेरह साल पहले मक्का गया था और तब से पीना छोड़ दिया है। अगर आप चाहें तो लाकर दे दूँगा।" कहते कहते इब्राहीम ने अंगूरी शराब लाकर उन्हें दी। परन्तु उनको पीता देख उसके मुख में पानी आ गया। वह भी उनके साथ पीने लगा।

"बिना रोशनी के अच्छा नहीं लग रहा है, क्या बत्तियाँ जलाऊँ?" प्रियसखी ने इब्राहीम से पूछा।

इब्राहीम तो नशे में था ही। उसने एक बत्ती जलाने की अनुमति दे दी।

परन्तु अलीनूर ने जाकर महल की सारी खिड़कियाँ खोल दीं और सब बतियाँ जला दीं।

ठीक उसी समय, खलीफा अपने महल की खिड़की के सामने खड़ा था। जब उसकी नजर, नदी से होती बाग पर पहुँची तो उसको वहाँ रोशनी दिखाई दी। उसने झट अपने वजीर जाफ़र को बुलाकर कहा-"नालायक! इस शहर में जो कुछ होता है, मालूम नहीं करते। अगर बगदाद शहर पर दुश्मन हमला भी कर दें तो तुम्हें शायद मालूम न होगा? देखो! चित्र-महल



में बत्तियाँ कैसे जल रही हैं। जब मैं यहाँ हूँ तो यह क्यों और कैसे हुआ?"

वजीर जाफर ने रोशनी देखी। उसे न सूझा कि क्या कहे। "हुजूर! पिछले हफ्ताह इब्राहीम मेरे पास आया था। उसको अपने पोते का कोई संस्कार करना था। उसने चित्र महल में वह करने के लिए मेरी अनुमति माँगी। मैने यह सोचकर कि आपसे अनुमति ले लूँगा उसको स्वीकृति दे दी। फिर वह बात ही भूल गया।" उसने हिचकते हुए कहा।

"यह दूसरी गलती है। हम कोई भेंट भेजेंगे, इस आशा से ही उस बूढ़े इब्राहीम ने यह संस्कार की चाल चली होगी। तूने तो कोई उपहार दिये नहीं, मुझे भी देने का मौका न दिया।" खलीफा ने कहा।

"हुजूर, मेरी गल्ती माफ़ करें।" जाफर ने कहा।

"माफ किया, परन्तु आज रात को इब्राहीम के यहाँ काटने का निश्चय किया है। वह बहुत अच्छा, धार्मिक आदमी है। वह तत्वज्ञानियों को बुलाकर संस्कार में अच्छी बातें सुन रहा होगा। हमें इस मौके को नहीं चूकना चाहिये। यहीं नहीं, हमें वहाँ देख, बूढ़ा बहुत खुश होगा।" खलीफा ने कहा। जाफ़र का कलेजा थम-सा गया। उसने खलीफा से कहा कि अब बहुत देर हो गयी है, संस्कार हो गया होगा और सब अपने अपने घर चले गये होंगे। परन्तु खलीफा ने कहा कि वह जाकर ही रहेगा। वह, जाफर, कोतवाल मसूर ये तीनों व्यापारियों का वेश धारण करके निकले।

(अगले अङ्क में समाप्त)






[८]

[अद्भुत दीप के भूत की सहायता से अलादीन की केवल गरीबी ही ख़त्म न हुई। उसने राजकुमारी से शादी भी कर ली। वह राजमहल के सामने एक सुन्दर महल बनवा कर उसमें आराम से रहने लगा। वह गरीबों की परवाह फिक्र किया करता। जनता को उस पर गर्व था। उसकी पाँचों उँगली घी में थीं। अगर..........]

जादूगर, अलादीन को उस गुफा में बन्द कर मोरोको वापिस चला गया था। उसका ख्याल था कि गुफा में वह भूख से तड़प-तड़पकर मर गया होगा। उसे इसका बड़ा रञ्ज रहा कि उसके हाथ अद्भुत दीप न लगा था। रोज उसे अद्भुत दीप याद आता, अलादीन की मूर्खता भी याद आती और गुस्सा आ जाता। एक दिन जादूगर को अलादीन की लाश और अद्भुत दीप देखने की इच्छा हुई। इसलिए उसने इधर उधर लकीरें खींची। मन्त्र पढ़े और बैठकर उसने ध्यान लगा कर देखा। उसे गुफा तो दिखाई दी पर न उसमें अलादीन का शव था न अद्भुत दीप ही।

जादूगर आग बबूला हो गया। वह समझ गया कि अलादीन अद्भुत दीप लेकर बाहर निकल गया था। दान्त पीसता वह चिल्लाया-"अरे, अभागे!



इन्ही मुखों से अलादीन की मौत चाहोगे। देखते रहना।" उसने सोचा।

नगर में घूमता घूमता जादूगर अलादीन के महल के सामने गया। "दर्जी के लड़के का यह भाग्य? जिसके घर रोजे होते थे, उसके इतने ठाट-बाट। अरे, अलादीन! देखता रह, तेरी माँ से फिर सूत कतवाऊँगा। तेरे लिये में स्वयं अपने हाथ गढ़ा खोदूँगा।" वह मन में सोच रहा था।

पहरेदारों से पूछने पर मालूम हुआ कि अलादीन बहुत दिन पहले शिकार खेलने चला गया था। यह सुन जादूगर को बड़ी खुशी हुई। क्योंकि अलादीन की अनुपस्थिति में उसकी चाल और अच्छी तरह चल सकती थी। पर यह न मालूम था कि अलादीन अद्भुत दीप को घर छोड़ गया था या साथ ले गया था।

यह जानने के लिए सराय पहुँकर उसने ध्यान लगाया। उसे मालूम हो गया कि अलादीन अद्भुत दीप अपने महल में छोड़ गया था। उसे बड़ी खुशी हुई। वह उस जगह गया जहाँ ताम्बे का काम करनेवाले रहते थे। उसने वहाँ बारह ताम्बे के दीप

मेरा तिरस्कार कर अद्भुत दीप चुराने की हिम्मत! देख अब मेरा प्रताप।"

वह उसी दिन निकल पड़ा। कहीं पड़ाव नहीं किया। सीधे चीन पहुँचा। वहाँ के मुख्य नगर में गया। वहाँ एक सराय में ठहरा।

जादूगर अगले दिन सवेरे नगर देखने गया। जहाँ गया, वहाँ उसने अलादीन की ही प्रशंसा सुनी। "ओहो, अलादीन कितना खूबसूरत है। कितना बड़ा दानी है। कितना धनी है!" जादूगर उसकी प्रशंसा सुनकर जल-सा उठा। "देखना, तुम

खरीदे। उनको एक टोकरे में रखकर-"नये दीप, नये दीप पुराने दीप के बदले नये दीप" चिल्लाता चिल्लाता वह अलादीन के महल के पास गया। गलियों में खेलनेवाले बच्चों ने उसकी अजीब, बड़ी पगड़ी आश्चर्य से देखी। उसके विचित्र व्यापार पर भी उन्हें ताज्जुब हो रहा था। इसलिए वे जादूगर के पीछे पड़ गये।

अलादीन के महल के पास पहुँचकर जादूगर चिल्लाता गया-"पुराने के बदले नये दीप।" निन्यानवें खिड़कियोंवाले बुर्ज में रहनेवाली राजकुमारी ने जादूगर का चिल्लाना सुना और बाहर झाङ्क कर देखा। वह देखकर वह हँसी। उसकी दासियाँ भी हँसी। उनमें से एक ने अपनी मालकिन से कहा-"जब मैं मालिक के कमरे में झाड़ू लगा रही थी, वहाँ एक तिपाई पर एक पुराना ताम्बे का दीप रखा था। क्या उसे ले जाकर हम दिखायें और देखें कि वह सचमुच पुराने दीप के बदले नया दीप देता है कि नहीं। दासी ने अद्‌भुत दीप ही देखा था। अलादीन शिकार खेलने जाने से पहले उसे सुरक्षित रखना भूल गया था। कौन



भला भाग्य का लिखा मिटा सकता है? बिचारी राजकुमारी को न उस दीप के बारे में कुछ मालूम था न उसकी अद्‌भुत शक्ति के बारे में ही। उसने दासी से कहा-"हाँ हाँ, ऐसा ही करो। अपना पुराना दीप गुलाम को देकर भेजो और नया दीप माँगने के लिए कहीं। अगर इस पागल ने नया दीप दे दिया तो हम जिन्दगी-भर इस बात पर हँस सकेंगे।"

दासी अलादीन के कमरे में गयी। वहाँ से दीप उठा लाई। उसने उसे गुलाम को दे दिया। गुलाम ने उसे ले जाकर

जादूगर के हाथों में दी। चिराग देखकर उसकी आँखें चमकने लगीं। वह इस चिराग को लाखों में पहचान सकता था। उसने तुरन्त जादुई चिराग लिया और गुलाम को एक नया चिराग दे दिया।

गुलाम ने चिराग लेकर नौकरानी को दिया। नौकरानी खुशी से झूमती हुई शहजादी के पास पहुँची और बोली-"ये देखिए शहजादी, उस मूर्ख फेरी वाले ने उस पुराने चिराग बदले नया चिराग खुशी-खुशी दे दिया।"

शहजादी भी नए चिराग को देखकर प्रसन्न थी। वह भी उस फेरी वाले मूर्खता पर हँसने लगी। फिर शहजादी ने वह नया चिराग उसी अलमारी रख दिया, जिसमें अलादीन ने जादुई चिराग रखा हुआ था।

उधर वह जादूगर जादुई चिराग पाकर बहुत प्रसन्न था। सराय पहुँचते ही उसने चिराग घिसा। तत्काल चिराग का जिन्न प्रकट हुआ और बोला-"क्या हुक्म है मेरे आका?"

वह जिन्न से बोला-"फिर तुम अलादीन का महल उठाकर अभी और इसी समय मेरे घर अफ्रीका ले चलो।"

जादूगर तुरन्त अलादीन के महल में पहुँचा और अन्दर जाकर फाटक पार कर गया। जिन्न जमीन के अन्दर घुसा और अलादीन के महल को अपने का पर उठाकर अफ्रीका की ओर उड़ चला। अफ्रीका पहुँचने में जिन्न को कुछ ही समय लगा। यह सब इतनी जल्दी हुआ कि शहजादी को इसका आभास तक न हुआ। वह नहीं जानती थी कि अब वह अफगानिस्तान से हजारों मी दूर अफ्रीका पहुँच गई है।

इधर राजा अपने छत पर टहलते हुए जब अपने बेटी और दामाद के महल की ओर नज़र फेरी, तो महल नदारद। घबराकर उसने मन्त्री को खबर भेजा। मन्त्री राजा का हुक्म बजाने के

लिए आया। राजा ने उससे पूछा- "अपनी लड़की का घर कहाँ है?" मन्त्री को लगा जैसे राजा की अक्ल बिगड़ गई हो। उसने पूछा- "आपका यह प्रश्न क्या है?

"तो तुम कुछ नहीं जानते हो?" राजा ने पूछा।

"मैं तो कुछ नहीं जानता महाराज।" मन्त्री ने कहा।

"यानि तुमने अलादीन का घर ही नहीं देखा। अब देखो।" राजा ने मन्त्री को खिड़की के पास ले जाकर कहा।

"अरे, अरे! अलादीन का घर गायब है। आप अब तो मानेंगे ही कि यह अलादीन जादूगर था।" मन्त्री ने कहा। राजा ने गुस्से में पूछा-"यह नीच, यह जादूगर, ठग कहाँ है? अलादीन कहाँ है?"

"महाराज, वह शिकार खेलने गया हुआ है। आज ही उसे वापस आना है, क्या आपकी आज्ञा है कि मैं उससे रास्ते में मिलूँ और मालूम करूँ कि महल का क्या हुआ?" मन्त्री ने पूछा। मन्त्री खुश था कि आखिर इतने दिनों बाद उसकी विजय हुयी थी।





आश्चर्य में, अलादीन थोड़ी देर तक कुछ न कह पाया। आखिर उसने पूछा-"क्या राजा ने बताया था कि मैंने ऐसा कौन-सा कसूर किया है? क्योंकि मैंने न उनको न उनके राज्य को किसी प्रकार की हानि पहुँचाई है।"

"राजा ने मुझ से कुछ नहीं कहा है।" सरदार ने जवाब दिया।

"यह बात है तो जो आपको करना है सो कीजिये।" कहता अलादीन घोड़े पर से उतरा। सरदार ने उसके हाथ बाँध दिये। उसकी कमर में जञ्जीर बान्धकर, जञ्जीर हाथ में ले घोड़े पर सवारी करता नगर वापिस आया। वह सारा फासला अलादीन ने पैदल ही तय किया।

अलादीन को, सरदार और उसके सैनिक, बान्धकर लाते हुए शहरवालों ने भी देखा। वे ताड़ गये कि अलादीन को, राजा फाँसी पर चढ़वा रहे थे। उन्हें अलादीन पर बहुत प्रेम था। इसलिए वे तलवार, भाले, लाठी, पत्थर, लेकर सरदार

"कोई जरूरत नहीं। सरदार से कहो कि वह उस दुष्ट को, हाथ पैर बाँध कर लाये।" मन्त्री ने सरदार को राजा की आज्ञा बताई। सरदार सौ सैनिकों को साथ लेकर अलादीन से मिलने गया। नगर का फाटक पार कर, कुछ दूर गया था कि उसे अलादीन दिखाई दिया। तुरन्त सैनिकों ने उसे घेर लिया।

सरदार ने अलादीन से कहा-"हुजूर, मुझे माफ़ करें। मैं राजा का नौकर हूँ। मुझे उनकी आज्ञा का पालन करना होगा। राजा ने मुझे आपको जञ्जीरों से बान्धकर लाने के लिए कहा है। आपका मुझ पर कितना ही एहसान है। इसलिए मुझे माफ़ कीजिये।"

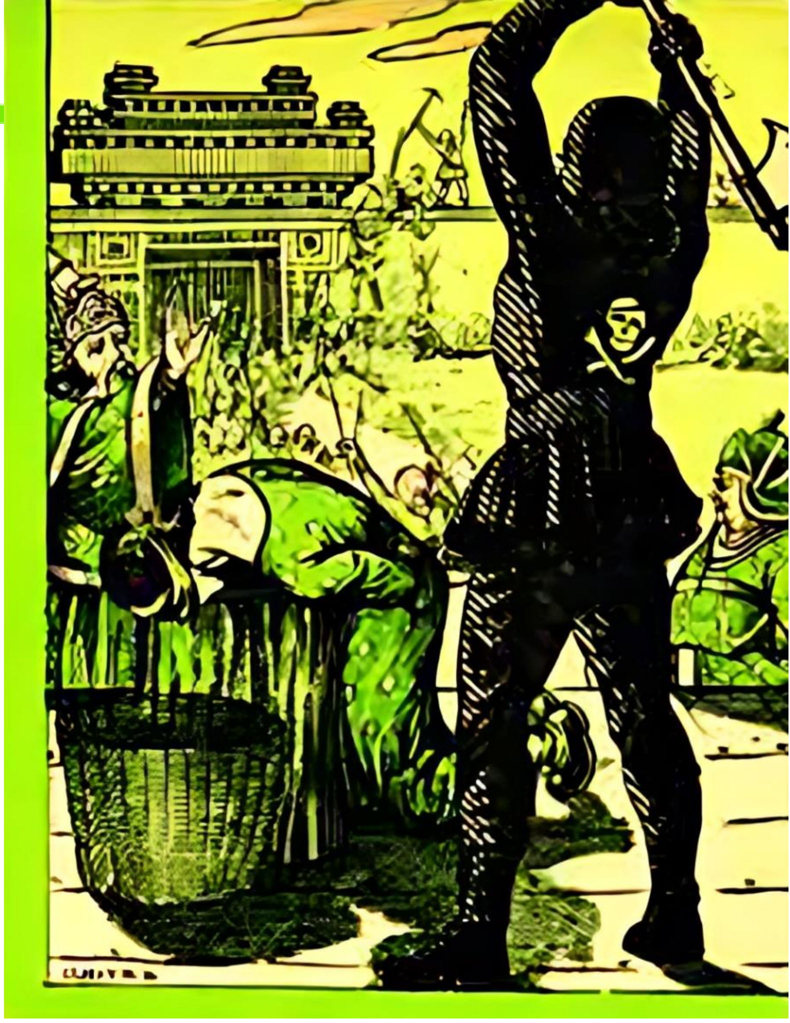
के पीछे चलने लगे। जल्दी ही इस भीड़ की संख्या सैकड़ों से हजारों की हो गई। और उनका आवेश निरन्तर बढ़ता जा रहा था।

सौ सैनिक साथ थे। पर सरदार के लिए अलादीन को, राजमहल के अहाते में ले जाना बहुत मुश्किल हो गया। जनता, भूखे भेड़ियों की तरह थी। अलादीन के अन्दर जाते ही वे जोर से चिल्लाने लगे-"अलादीन को छोड़ दो।"

राजा बड़े गुस्से में था। अलादीन के सामने आते ही उसने यह भी न पूछा कि क्या बात थी, तुरन्त आज्ञा दी कि उसका सिर कटवा दो।

जल्लादों ने अलादीन की जञ्जीरें खोल दीं। उसके आँखों पर पट्टी बाँधकर वधस्थल को ले गये। उन्होंने कहा-"घुटने टेक कर अब भगवान का ध्यान कीजिये।" पर उनके अलादीन के गले को काटने से पहले, लोग चार दिवारी फान्दकर अन्दर कूदने लगे। कई राजमहल का फाटक तोड़ने लगे।

राजा ने जल्लाद से कहा-"ठहरो।" उसने सरदार की ओर मुड़कर कहा-"लोगों से कह दो कि



अलादीन का सिर नहीं कटवाया जा रहा है।" तब लोगों का गुस्सा कुछ शान्त हुआ।

अलादीन की आँखों की पट्टी उतार दी गई। उसने खड़े हो कर गदगद स्वर में पूछा-"महाराज! क्या मुझे आप बता सकते हैं कि आपने मेरा इतना अपमान क्यों किया? मैंने कौन- सा अपराध किया है।"

"क्या अपराध किया है, तुम नहीं जानते? देख दिखाता हूँ। मेरे साथ आओ।" कहता हुआ, राजा अलादीन को राजमहल के पिछवाड़े में ले गया।

अलादीन ने देखा कि उसका महल वहाँ न था। उसकी आँखों के सामने कोहरा-सा छा गया। उसके मुख से बात न निकली।

"परम दुष्ट। मेरी लड़की क्या हुयी? मेरी इकलौती लाड़ली लड़की।" राजा ने पूछा।

"महाराज! मैं कुछ नहीं जानता हूँ।" अलादीन ने कहा।

"सुन, मैं तेरा मनहूस महल नहीं चाहता। अगर तूने मुझे मेरी लड़की न दिखाई तो तेरा सिर कटवा दूँगा।" राजा ने कहा।

"महाराज! जो भाग्य में लिखा है उसे कौन मिटा सकता है? अगर उस कसूर के लिए, जो मैंने नहीं किया है मुझे सिर देना ही पड़ा तो कौन क्या कर सकता है? परन्तु मुझे अपनी पत्नी की खोज करनी होगी। इसके लिए मुझे चालीस दिन का समय दीजिये।" अलादीन ने निवेदन किया।

"समय दे दिया है। जाओ, अगर इस समय में मेरी लड़की लाकर तुमने न दिखाई तो तुम जहाँ होंगे, वहाँ से बुलवा कर तुम्हें सजा दूँगा। यह याद रखना।"

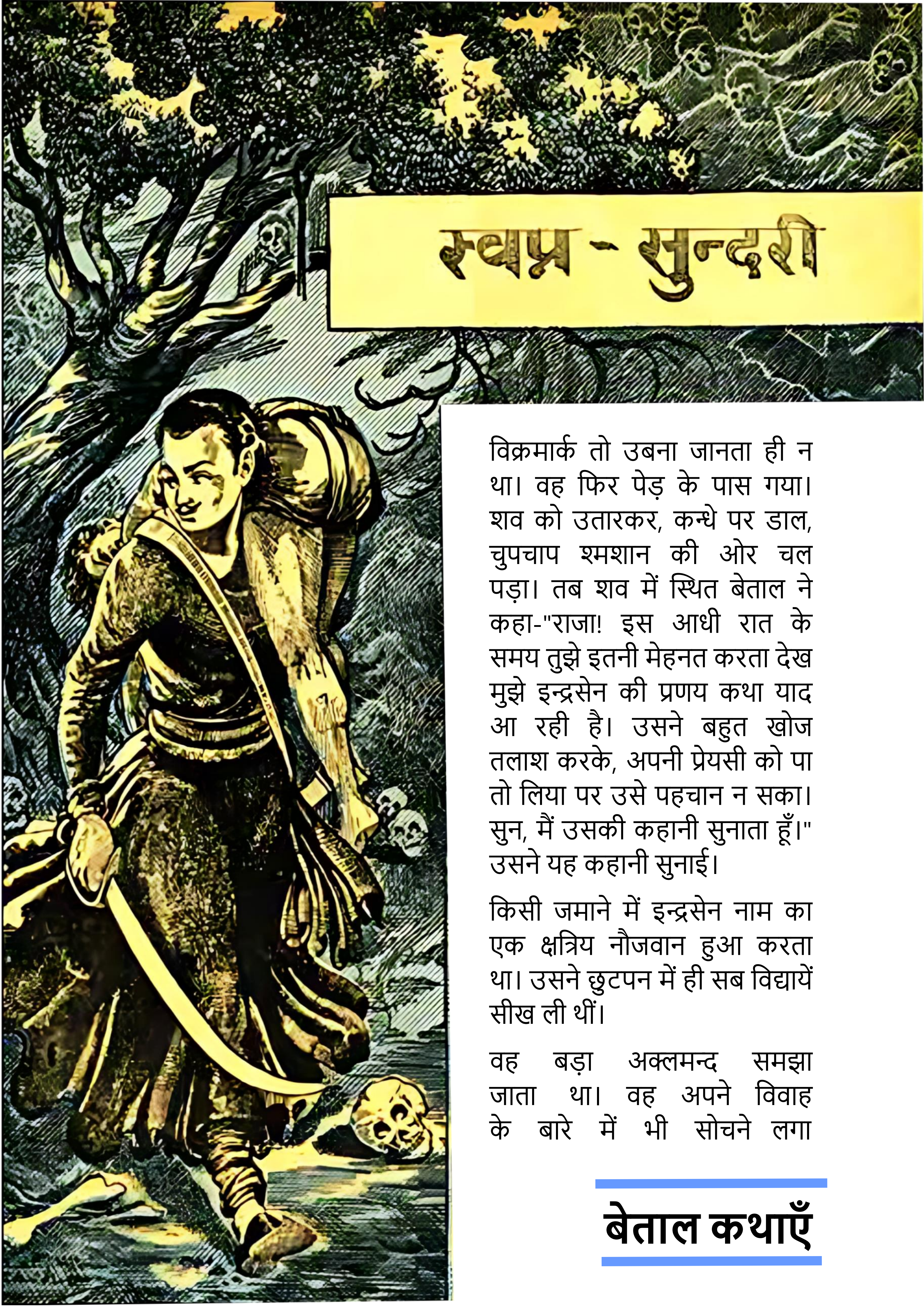
अलादीन सिर झुकाकर बाहर गया। दुःख के कारण उसका हुलिया ही बदला हुआ था। वह, जो कोई मिलता उससे पूछता-"मेरा घर क्या हुआ? मेरी पत्नी कहाँ है?"

"राजा की निर्दयता के कारण विचारा अलादीन पागल हो गया है।" लोगों ने सोचा।

अलादीन नगर छोड़कर चला गया।

(अभी और है)





# स्वप्न - सुन्दरी

विक्रमार्क तो उबना जानता ही न था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतारकर, कन्धे पर डाल, चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा! इस आधी रात के समय तुझे इतनी मेहनत करता देख मुझे इन्द्रसेन की प्रणय कथा याद आ रही है। उसने बहुत खोज तलाश करके, अपनी प्रेयसी को पा तो लिया पर उसे पहचान न सका। सुन, मैं उसकी कहानी सुनाता हूँ।" उसने यह कहानी सुनाई।

किसी जमाने में इन्द्रसेन नाम का एक क्षत्रिय नौजवान हुआ करता था। उसने छुटपन में ही सब विद्यायें सीख ली थीं।

वह बड़ा अक्लमन्द समझा जाता था। वह अपने विवाह के बारे में भी सोचने लगा



था। उसका विश्वास था कि साधारणतया स्त्रियाँ अल्प बुद्धि की होती हैं, उनको, साड़ी व जेवर-जवाहरातों पर जो मोह होता है और किसी चीज़ पर नहीं होता। वे गम्भीर विषयों पर भी सोच नहीं पाती। वह ऐसी स्त्रियों से, किसी भी हालत में शादी नहीं करना चाहता था। चुस्त अक्लमन्द, धैर्यशाली कन्या से ही उसने विवाह करने का निश्चय किया। उसको वैसी कन्या कहीं न दिखाई दी।

इन्द्रसेन को एक राजा के यहाँ नौकरी मिल गई। राजा और राजकर्मचारी जान गये कि यद्यपि वह उम्र में छोटा था तो भी वह अक्लमन्दी में बड़ा ही था।

राजा की नौकरी में एक वृद्ध सामन्त भी था। उसका नाम चन्द्रवर्मा था। शहर से बाहर पहाड़ों में उसका एक बड़ा महल था। उसमें उसके करीब सौ बन्धुबान्धव रहा करते थे। उनमें कई विवाह योग्य कन्यायें थी। चन्द्रवर्मा ने सोचा कि अच्छा होगा यदि इन्द्रसेन उनमें से किसी एक से शादी कर ले। उसने एक दिन इन्द्रसेन से कहा- "हमारे राजा, महीने भर के लिए तीर्थ यात्रा पर जा रहे हैं। तुम हमारे यहाँ ठहर सकते हो।" उसने उसको निमन्त्रण दिया। इन्द्रसेन मान गया।

जिस दिन राजा यात्रा पर निकला, इन्द्रसेन चन्द्रवर्मा के घर गया। चन्द्रवर्मा का महल, राजमहल से किसी प्रकार कम न था। परन्तु वहाँ ऐसे कोई प्रतिबन्ध न थे जो राजमहल में थे। जो जहाँ चाहे वहाँ जा सकता था। महल के चारों और फल के बाग और फूलों के बगीचे थे थोड़ी दूरी पर पहाड़ थे।

जिस दिन से वह आया था, उसे यह अनुभव हो रहा था जैसे स्वर्ग में हो। उसे बहुत स्वतन्त्रता थी। आते ही चन्द्रवर्मा ने अपने बन्धुबान्धवों से उसका परिचय कराया। उनमें बहुत-सी कन्यायें थी। कई सुन्दर भी थीं। परन्तु उनकी बुद्धिमत्ता के बारे में इन्द्रसेन कुछ न जान सका। वे भी और स्त्रियों की तरह थी। चन्द्रवर्मा के घर आते ही इन्द्रसेन को अकेले पहाड़ों पर जाने की इच्छा हुई। उसे पहाड़ों की चोटी पर बैठकर, चारों तरफ देखते, निर्मल हवा खाना बहुत पसन्द था।

परन्तु जिस पहाड़ पर वह चढ़ रहा था, उस पर आधी दूर तक रास्ता जाता था। उसके बाद पेड़ों के सहारे, रेङ्गते ऊपर जाना पड़ता था। वह बड़ा खतरनाक था। इसलिए किसी के उस चोटी तक पहुँचने की कहीं निशानियाँ न थीं।

"मैं उस चोटी को, जिस पर अभी तक कोई नहीं चढ़ा है, अपना कर लूँगा। जबतक मैं यहाँ हूँ तबतक रोज आया करूँगा।" यह सोच इन्द्रसेन चोटी तक रेङ्गता हुआ गया।



चोटी पर समतल प्रदेश था। उसके बीच में एक छोटा-सा पोखर था। उसमें सफेद कमल थे। उस पोखर के चारों और बड़े बड़े चकोर पत्थर थे। यह दृश्य देखकर इन्द्रसेन बहुत खुश हुआ। वह पत्थर पर बैठने को था कि उस समय उस पत्थर पर उसे फूल दिखाई दिये।

उनको देखकर इन्द्रसेन को आश्चर्य हुआ। वे फूल वहाँ किसी पौधे पर न थे। वे किसी स्त्री की वेणी के थे। कोई स्त्री वहाँ आकर एकान्त में बैठा करती थी। वैसी स्त्री, कोई साधारण स्त्री न होगी,

यह सोचकर, इन्द्रसेन का उसके बारे में अच्छा ख्याल बन गया।

उस स्त्री के बारे में जानने के लिए इन्द्रसेन को कुतूहल हुआ। उसने आसपास खोज की। कहीं उसकी कोई और वस्तु वहाँ तो न थी। एक पत्थर के पास ताड़ का पत्ता दिखाई दिया। जब उसने उसे उठाकर देखा तो उसपर यह लिखा था-"स्त्री के लिए उत्तम पति के मिलने से बढ़कर कोई सौभाग्य नहीं है। पुरुष साधारणतया स्वार्थी होते हैं। इसलिए स्त्रियों की बेअक्ली को सह लेते हैं। न मालूम मुझे कैसे पति मिलें। उस व्यक्ति से जो मुझे न समझ सके, शादी करने की अपेक्षा बिना शादी किये रहना ही अच्छा है।"

इस प्रकार के ताड़ के पत्ते दो तीन और थे। उन पर भी उस स्त्री ने इसी प्रकार की बातें लिखी हुई थी। इन्द्रसेन जान गया कि वह स्त्री, कभी कभी वहाँ आया करती थी और एकान्त में बैठकर, उसको जो कुछ सूझता, ताड़ के पत्तों पर लिख देती थी और उन्हें वहाँ छोड़ देती थी।



ज्यों ज्यों सोचता जाता त्यों त्यों उसे लगता कि वह स्त्री, उसकी पत्नी हो सकती थी। वह विवाह योग्य आयु की है। पर वह सुन्दर है कि नहीं यह इन्द्रसेन न जान सका। उसने न अपने सौन्दर्य के बारे में, न भावी पति के सौन्दर्य के बारे में ही कहीं कुछ लिखा है।

कुछ भी हो इन्द्रसेन ने उस स्त्री को जानने का निश्चय किया। वह पहाड़ से चन्द्रवर्मा के घर उतर आया। चन्द्रवर्मा के घर में इन्दुमुखी, वासन्ती, चन्द्रकला, पद्मनी, भारती, आदी कई कन्यायें थीं। क्योंकि जहाँ चाहें वे घूमती फिरती थीं, इसलिए यह पता लगाना मुश्किल था कि किस समय कौन कहाँ थीं। भोजन के समय भी सब न मिलते थे। जब जिसकी मर्जी होती तब खाना खा आती।

इन्द्रसेन ने सबसे बातें कीं। किसी ने भी कोई खास अक्लमन्दी न दिखाई। सबने और स्त्रियों की भाँति, सौन्दर्य, श्रृङ्गार, वैभव आदि के विषय में हीं बातें कीं। इसलिए सम्भाषण द्वारा वह अपनी स्वप्न सुन्दरी प्रेयसी को न जान पाया। हो सकता है कि उनमें वह न हो। भले





ही वह कोई मामूली दासी हो, उसने उससे शादी करने का निश्चय किया।

उसने सोचा कि अगर यह मालूम कर लिया गया कि किस समय वह पहाड़ की चोटी पर जाती थी तो आसानी से उससे मिला जा सकता था। इन्द्रसेन एक सप्ताह तक समय बदल बदल कर चोटी पर गया। एक दिन एक पत्थर पर एक छोटा-सा ताड़ का पत्ता रखा था। उस पर लिखा था-"मुझे जानने के लिए मेरा पीछा मत कीजिये। भगवान ने आपको बुद्धि दी है। उसका उपयोग करके यह जानिये कि मैं कौन हूँ।"

यह देख इन्द्रसेन को आश्चर्य हुआ। यह साफ़ हो गया कि जो कुछ वह कर रहा था वह जानती थी। इसका मतलब यह हुआ कि उसके प्रति उसका अनुकूल अभिप्राय ही था। यह जानने की कोशिश छोड़ कि वह क्या समझेगी, वह रोज शाम को चोटी पर जाता और अच्छे अच्छे फूल वहाँ रख आता। अगले दिन जब वह वहाँ जाता तो वे फूल वहाँ न होते, उसकी जगह दूसरे फूल होते।

एक दिन इन्द्रसेन ने चोटी पर एक चिट्ठी रख दी-"तुम्हें जानने के लिए मेरे पास कोई भी आधार नहीं है। तुम मेरी थोड़ी सहायता क्यों नहीं करती हो?" उसने उस चिट्ठी में पूछा।

"सहायता की तो आप मुझे जान जायेंगे। इससे तो अच्छा यही है कि मैं ही आपके समक्ष प्रत्यक्ष होऊँ। यह मेरी इच्छा नहीं है। अगर मेरी सहायता के बिना ही मुझे जान सके, तभी आप मेरे उपयुक्त पति सिद्ध हो सकते हैं।" उसने उस चिट्ठी का जवाब दिया।

इस प्रकार तीन सप्ताह बीत गये। वह स्त्री, कड़ी दुपहरी में जब और भोजन

किया करते थे, चोटी पर चली जाती थी; यह इन्द्रसेन ने अनुमान कर लिया था। अब उसके पास केवल एक सप्ताह का समय रह गया था। इसलिए उसने एक दिन दोपहर को चोटी पर जाकर यह जानना चाहा कि वह कौन थी।

वह जब पहाड़ पर गया तो उसे सफेद-साड़ी पहिने कोई स्त्री, रेङ्गती ऊपर जाती दिखाई दी। इन्द्रसेन जल्दी जल्दी ऊपर जाने की कोशिश कर रहा था कि उसका पैर फिसल गया। वह नीचे गिर गया। उसके पैर में मोच आ गई। जब उसने सिर उठाकर देखा तो उस स्त्री का कहीं पता न था।

वह दर्द के कारण लङ्गड़ाता लङ्गड़ाता पहाड़ से उतर कर आने लगा। आधे रास्ते में उसे एक घुड़सवार मिला। उसने उससे कहा-"बाबू, इसपर चढ़ जाइये। घर पहुँचा दूँगा।"

"तुझे कैसे मालूम कि मेरे पैर में मोच आ गई है?" इन्द्रसेन ने पूछा।

"उस स्त्री ने कहकर भेजा है।" उसने कहा।



"वह स्त्री कौन है? उसका नाम क्या है? कैसी है वह? लम्बी है, ठिगनी है?" इन्द्रसेन ने कितने ही प्रश्न पूछे। परन्तु वह घुड़सवार एक प्रश्न का भी उत्तर न दे सका।

इन्द्रसेन के घर पहुँचते ही सबने आकर सहानुभूति प्रकट की। सबको उसने ध्यान से देखा। उसे लगा कि इन्दुमुखी नाम की लड़की उसकी ओर ख़ास दया से देख रही थी। वह बहुत सुन्दर भी थी। वह जब आई तो उसके साथ कोई न था। इसलिए "मुझे मालूम हो गया है, तेरे दिये हुए फूल, पत्र" उसने कहना शुरू किया।



यकायक इन्दुमुखी के मुँह पर भय दिखाई देने लगा। वह मुख खोल कर कुछ कहना चाहती थी, परन्तु चली गई। फिर चन्द्रकला नाम की लड़की अकेली आई। उसने इन्द्रसेन से उत्कण्ठापूर्वक पूछा- "इन्दुमुखी मन्त्री के लड़के से प्रेम कर रही है, सुना है, यह आपको मालूम हो गया है। कृपा करके कुछ समय तक यह बात किसी से न कहिये।"

इन्द्रसेन का दिल बैठ-सा गया। उसकी स्वप्न सुन्दरी इन्दुमुखी न थी तो कौन थी वह न जान सका। उस दिन रात को जब वह सो रहा था तो उसके तकिये के ऊपर एक पत्र रखा था। सवेरे उठकर उसने वह पत्र पढ़ा। उसमें यह लिखा था।

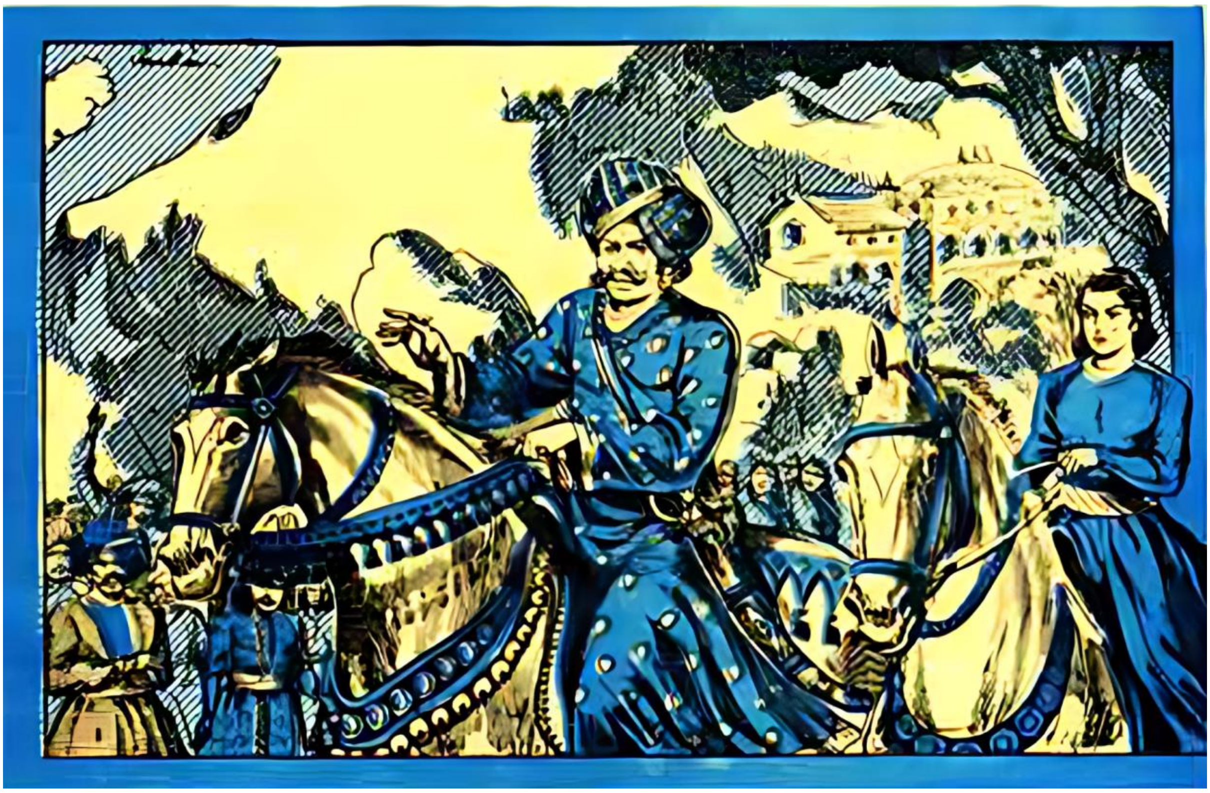
"मेरे कारण क्योंकि आपके पैर में मोंच आई है, मुझे बहुत दया आ रही है। मैंने अपने को आपके सामने व्यक्त करने का भी निश्चय कर लिया है। परन्तु मेरे नियम का उल्लंघन नहीं किया जा सकता। अगर आप मुझे न पहचान सके तो हमारा विवाह व्यर्थ है।"

इन्द्रसेन पागल सा हो गया। उस घर की सब लड़कियों से वह पहले ही बात कर चुका था। किसी ने भी अक्लमन्दी से बातचीत न की थी। जिस किसी से भी बात की, उन सब ने वही छोटी-मोटी बातों पर हल्की फुल्की बातें कीं। किसी में भी सुन्दर अभिरुचियाँ न थीं। बड़े सब्र से उसने उनसे बातचीत की थी। यह सोच कर कि बातों बातों में वह अपनी स्वप्न-सुन्दरी को जान सकेगा, उसने उनकी ऊँटपटाङ्ग बातें सुनी। परन्तु कोई फायदा नहीं हुआ। दो तीन दिन में उसका पैर ठीक हो गया। फिर नगर वापस जाने का समय

आ गया। जिस दिन वह जा रहा था, उसे एक और चिट्ठी मिली। उसमें यह लिखा था-"आप मुझे पहचान ही न सके। मेरी एक भी परीक्षा में भी आप उत्तीर्ण न हो सके। यह न सोचिये कि मैं आपके सामने आये बिना छुपी रही। हम बहुत बार बार मिले, बहुत हमारी बातचीत भी हुई। मुझे जानने के लिए आपने बहुत यत्न किये। पर एक भी ऐसा यत्न न किया, जिसकी मैं कल्पना करती थी। मुझे निराशा हुई। नमस्ते।"

इन्द्रसेन हताश हो गया। वह उस दिन चन्द्रवर्मा के साथ नगर वापस चला गया। वह न जान सका कि उसकी स्वप्न-सुन्दरी कौन थी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"राजा, मुझे एक सन्देह है। क्या कारण था कि इन्द्रसेन की स्वप्न सुन्दरी उसके सामने व्यक्त न हुई? क्या उसे इस बात पर गुस्सा आ गया था कि उसके मना करने पर भी वह उसका पीछा कर रहा था? नहीं तो क्या उसको उस पर काफी प्रेम न था? उसको पहचानने



के लिए उसने एक भी प्रयत्न न किया था, यह उसका कहना था। वह प्रयत्न क्या है? अगर इन प्रश्नों का तूने जान बूझकर जवाब न दिया तो तेरा सिर फूट जायेगा।"

"तेरे पहले सन्देह ठीक नहीं हैं। अगर वह इस बात पर नाराज होती कि वह उसका पीछा कर रहा था तो वह उसके पैर में मोच आने पर उसे देखने न आती। इस तरह वह उसे जान जाता। अगर उसमें इन्द्रसेन को पति बनाने की इच्छा न होती तो वह महीने भर जबतक इन्द्रसेन वहाँ रहा, चोटी पर जाना छोड़ देती। तब इन्द्रसेन को कोई कठिनाई न होती। जैसा उसने अपने आखिरी पत्र में लिखा था, इन्द्रसेन ने उसको पहचानने के लिए एक प्रयत्न न किया था। यह प्रयत्न क्या है, हम आसानी से अन्दाज लगा सकते हैं। पुरुष स्वार्थी हैं, इसलिए वे स्त्रियों की बेअक्लमन्दी सह लेते हैं, उसका ख्याल था ही, यह बात इन्द्रसेन जानता था। जितने दिन वह चन्द्रवर्मा के घर रहा उसने कन्याओं से बातें करते वक्त, उनकी बुद्धिहीन सम्भाषण को सह तो लिया परन्तु उनसे घृणा न की। उसकी परीक्षा करने के लिए, उसकी स्वप्न सुन्दरी ने भी औरों की तरह बातचीत की। इन्द्रसेन भी क्यों कि स्वार्थी था इसलिए उसने उन स्त्रियों की बुद्धिहीनता सह ली। उसे डर था कि अन्यथा उसकी स्वप्न सुन्दरी नाखुश न हो जाये। सब पुरुष यही करते हैं। इसलिए वह स्वप्न सुन्दरी खो बैठा।" विक्रमार्क ने कहा।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही, बेताल अदृश्य हो गया और शव के साथ पेड़ पर चढ़ गया।

(कल्पित )






एक यात्री जङ्गल के रास्ते जा रहा था। जाते जाते अन्धेरा हो गया। सर्दी का मौसम था। उस ठण्ड में, अन्धेरे में जाने कितनी दूर जाना पड़े, यह वह यात्री सोच ही रहा था कि थोड़ी दूर पर उसे एक कुटिया दिखाई दी।

वह यात्री उस कुटिया में गया। कुटिया में एक अधेड़ आदमी रसोई कर रहा था, उसके सिवाय उस कुटिया में कोई न था। एक कोने में एक बिल्ली लेटी हुई थी।

"जी! मैं एक परदेशी हूँ। बहुत दूर से चलता आ रहा हूँ। इस रात के समय जङ्गल में फँस गया हूँ। आज रात थोड़ा मुझे खाने को दीजिये। अगर आप मुझे यहाँ सोने दें तो आपका उपकार कभी न भूलूँगा।" यात्री ने कहा।

"मुझे कोई आपत्ति नहीं है। आज रात के लिए तुम मेरे अतिथि हो। यहीं सो सकते हो। पर मेरा एक सिद्धान्त है। जो कोई मेरे घर आता है उसको मेरे प्रश्नों का ठीक उत्तर देना पड़ता है, नहीं तो मैं उसकी मरम्मत करता हूँ। अगर तुम यह मानते हो तो रहो; नहीं तो अपने रास्ते चले जाओ।" उस व्यक्ति ने कहा।

यात्री ताड़ गया कि वह आदमी जरा सनकी था। पर जलती भट्टी को देखकर उसकी आगे जाने की इच्छा न हुई।

"क्या मैं इस आदमी के प्रश्नों के उत्तर न दे सकूँगा?" यह सोचकर यात्री उस आदमी की शर्त मान गया।

"अच्छा, तो दरवाजा बन्द कर अन्दर आओ, हाथ वगैरह सेक लो। इतने में

सुषमा देवी

खाना पक जायेगा। तब खायेंगे।" उस आदमी ने कहा।

थोड़ी देर में खाना बन गया। उसने अपने लिए और अपने अतिथि के लिए भोजन परोसा। दोनों ने पेट भर भोजन किया। भोजन के बाद दोनों गप्पे मारने के लिए आराम से बैठ गये। बातों बातों में अपने अतिथि को कोने में बैठी बिल्ली को दिखाकर उसने पूछा-"वह क्या है?"

उसने सोचा कि वह आदमी, क्यों बच्चों के से प्रश्न पूछ रहा है। उसे अचरज हुआ। उसने कहा-"वह बिल्ली है न!"

"नहीं, वह स्वच्छता है।" कहते हुए उस आदमी ने अपने अतिथि को एक चपत मारी।

यह देख यात्री को और आश्चर्य हुआ। इतने में उस आदमी ने पानी का घड़ा दिखाकर पूछा-"उसमें क्या है?"

"पानी!"

"नहीं, उसमें है अच्छाई।" कहते हुए उस आदमी ने अतिथि को एक और चपत मारी।



थोड़ी देर बाद आदमी ने यात्री से पूछा-"उस चूल्हे में क्या है?"

"आग!" यात्री ने कहा।

"नहीं, सुख है।" उस आदमी ने कहा। क्योंकि अतिथि ने गलत जवाब दिया था इसलिए उसने उसे एक और चपत मारी।

इस बार उस आदमी ने छत की ओर इशारा करके पूछा-"यह क्या है?"

"छप्पर!" यात्री ने जवाब दिया। उसे डर था कि उसे फिर चपत खानी होगी।

"नहीं, ऊँचाई?" फिर यात्री के एक और चपत लगी।

यात्री ने कहा-"मेरा सिर चकरा गया है। बाहर जाकर जरा ठण्डी हवा खा आऊँ।" कहकर वह दरवाजा खोल कर बाहर गया। कोने में सिकुड़ी हुई लेटी चिल्ली अङ्गड़ाई लेती हुई उठी और वह भी बाहर चली गई।

यात्री ने उस बिल्ली को पकड़ा। उसकी पूँछ में चीथड़े बाँध दिये। चीथड़ों को आग दिखा दी फिर उसे छप्पर पर चढ़ा दिया। उसके बाद अन्दर आकर उसने उस आदमी से कहा-"आपकी स्वच्छता सुख को साथ लेकर ऊँचाई पर चली गई है। अच्छाई से सुख को रोकिये।"

उस आदमी को ये बातें बिल्कुल समझ में न आई। वह झुञ्झलाया, पूछने लगा-"क्या ऊँटपटाङ्ग बातें कर रहे हो। क्यों ठीक तरह नहीं कहते हो?"

"अरे बाबले, तेरी छत पर आग लग गई है। जाकर बुझा तेरा आतिथ्य मेरे लिए काफी है। मैं अपने रास्ते जा रहा हूँ।" कहकर यात्री ने उस आदमी को खूब पीटा और अपना बोरिया बिस्तर लेकर उस अन्धेरे में ही निकल गया।





# राज-प्रतिनिधि

मृगराज शेर को मालूम हुआ कि जङ्गल के किसी प्रान्त में जन्तुओं में अराजकता फैली हुई थी। वे मनमानी कर रहे थे। शेर के मन्त्री गधे ने सलाह दी कि उस प्रान्त में एक राज प्रतिनिधि नियुक्त करने से शान्ति स्थापित की जा सकती थी।

राज-प्रतिनिधि होने के लिए भालू से अधिक कोई उपयुक्त न था। इसलिए युद्ध में अभ्यस्त एक अनुभवी भालू को राज-प्रतिनिधि के पद पर नियुक्त किया। राज-प्रतिनिधि को जाते समय गधे ने यह सलाह दी-

"यह तुम्हारी जिम्मेवारी है कि प्रजा में राज-भक्ति बनी रहे। इसलिए थोड़ी-बहुत खून खराबी की जरूरत है। बिना रक्त प्रवाह के हमारा नाम इतिहास में न आयेगा। परन्तु इतिहास बहुत खतरनाक है। उसको देखकर तो हमारा राजा भी काँप उठता है। अतः तुम्हें बहुत सावधानी से अपना काम करना होगा।"

भालू उस प्रान्त में गया, जिसके शासन के लिए वह नियुक्त किया गया था। वह अपनी नौकरी पर इतना खुश था कि उसने खूब ताड़ी पी। वह नशे में आ गया और बेहोश हो, पेड़ों के बीच में सो गया।

थोड़ी देर बाद एक चिड़िया उस तरफ आई। उसने नशे में सोये हुए भालू को देखकर सोचा कि कोई पेड़ का ठूँठ पड़ा था। वह उस पर बैठकर चिल्लाने लगी।

मुश्किल से भालू ने आँखें खोलकर पूछा-"राज-प्रतिनिधि के शरीर पर बैठनेवाला यह राजद्रोही कौन है?"

"अरे, यह ठूँठ तो बोलता है।" आश्चर्य करती हुई चिड़िया, राज-प्रतिनिधि

श्री सुमन कुमार जोशी

के सिर पर जा बैठी। तुरन्त राज प्रतिनिधि चिड़िया को पकड़कर निगल गया।

फौरन आसपास के पेड़ों से अट्टहास सुनाई दिया-"ओ हो हो, राज-प्रतिनिधि चिड़िया निगल गया।" एक बगुले ने कहा। "इसमें अक्ल नहीं है, चिड़िया निगल गया।" कौवे ने कहा।

देखते देखते सारे जङ्गल में अट्टहास होने लगा। और तो और, पोखरों के मेण्ढक, मच्छर, और कीड़े-मकोड़े भी, राज-प्रतिनिधि पर हँसे। क्योंकि छोटे-मोटे लोग ही चिड़िया निगला करते थे।

जल्दी ही यह खबर राजा के पास पहुँची। "इस नीच को राज प्रतिनिधि बनाकर क्यों भेजा? उसे वापिस बुलाओ। इसे प्रजा को डराने सताने के लिए भेजा था और यह इतिहास में अपकीर्ति पाकर आया।" सिंह ने अपना गुस्सा इस प्रकार व्यक्त किया। भालू को पद से हटा दिया गया। वह वापिस घर चला आया।

उसकी जगह, गधे ने एक और भालू कोनियुक्त किया। वह भालू बहुत अक्लमन्द था। वह बिना किसी धूम धमाके के अपने काम पर लग गया। उसने कभी भी जङ्गल की राजनीति में दखल न दी। वह अपने राजमहल से कहीं बाहर न गया।

जङ्गल में बाकी जन्तुओं को मौज करते, खाते पीते, नाचते, गाते, घूमते फिरते जब राज प्रतिनिधि देखता, तो उसे ईर्ष्या होती, यद्यपि वह उनका शासन करने के लिए आया था। इस व्यवहार के कारण, जङ्गली जानवरों ने उस राज प्रतिनिधि को कीर्ति दी। इतिहास में उसको प्रतिष्ठित स्थान मिला। सिंह ने भी सन्तोषपूर्वक उसे "राजमान्य" की उपाधि दी।






[१०]

[समुद्र में जो मुसीबतें झेली जा सकती थी, रूपधर ने झेलीं। उसके नौकर, अनुचर सब डूब गये। वह फैपासिया के किनारे पहुँचा। वहाँ के राजा महामेधी ने उसको आतिथ्य, आश्रय, अभय दिया। रूपधर के सम्मान में जो भोज दिया गया था उसमें जब अन्ध गायक ने "काठ के घोड़े" की कहानी सुनाई तो रूपधर की आँखों में तरी आ गई। वह देख महामेधी ने अपने अतिथि से पूछा "आप कौन है? आपका देश कौन-सा है?"]

रूपधर ने महाराज को अपने नाम, नगर आदि के बारे में बताया। ट्रोय नगर के पतन के बाद उसने जिन्दगी के जो उतार चढ़ाव देखे थे, उनके बारे में भी बताया। उसने जब अपनी कहानी खतम की तो सब को अत्यन्त आश्चर्य हुआ।

अन्त में महाभेधी ने वहाँ उपस्थित व्यक्तियों से कहा-"हम सब मिल मिलाकर अपने अतिथि को उपहार दें। मैं स्वयं इनको कुछ सोना चाँदी दूँगा।" सब इसके लिए मान गये।

अगले दिन प्रातः काल होते होते उपहार बन्दरगाह पहुँचा दिये गये। महामेधी ने स्वयं उनको नौका पर चढ़वाया। उस दिन राज-महल में रूपधर को विदाई देने के लिए एक बड़ी दावत दी गई। सब बड़े जोश में थे।



भोजन समाप्त हुआ और पेय शुरु हुए। रूपधर ने खड़े होकर कहा- "सज्जनो, आज आपकी कृपा से मेरी पुरानी इच्छा पूरी हो रही है और मैं स्वदेश जा रहा हूँ। आपके आदर, सहायता व उपहारों को मैं कभी न भूल सकूँगा। देवता आपको सन्तोष सुख और विजय अनुगृहीत करें।"

सुन सब बड़े खुश हुये। रूपधर ने रानी से भी विदा ली। उसने उसको सुन्दर पोषाकें उपहार में दी। दासियों के द्वारा उसके लिए रोटियों और अंगूर का रस नौका पर भिजवाया।

नौका चलानेवाले युवकों ने नौका में रूपधर के लिए विछौना वगैरह तैयार कर दिया। रूपधर नौका पर चढ़ा। बिछौने पर लेट गया। नाविक चप्पू चलाने लगे। नौका हिली।

रूपधर तुरन्त सो गया। यह जानकर कि उसके सब कष्ट खतम हो गये हैं वह गाढ निद्रा में डूब गया। नौका, वायु की गति से चली और अगले दिन सन्ध्या से पहले इथाका पहुँच गई। इथाका के समुद्र तट पर एक अच्छा बन्दरगाह था। उस बन्दरगाह में पहुँचकर, जहाजों को लङ्गर डालने की भी जरूरत न होती थी। उस बन्दरगाह के पास एक बड़ा पेड़ था। उस वृक्ष पर घने पत्ते थे। उस के पास ही एक गुफा थी। उसमें शहद के छत्ते थे। बड़े बड़े पत्थर के खम्भे थे। यह सुना जाता था कि उस गुफा में देवकन्यायें आती थीं। उसमें मनुष्य आ जा सकते थे।

नौका के बन्दरगाह में आते ही, नाविक किनारे पर कूदे। क्योंकि रूपधर गाढ़ निद्रा में था, इसलिए बिछौने के साथ उसे उठाकर किनारे पर लिटा दिया।

फिर उन्होंने उसकी चीजें पेड़ की नीचे रख दीं। अपनी नाव चलाते वे अपने देश वापिस चले गये।

रूपधर उठकर आँखें मलता चारों तरफ देखने लगा। क्योंकि चारों और कोहरा था, इसलिए वह यह न जान सका कि वह कहाँ था। सामने के बन्दरगाह और बगल के पहाड़ों को भी वह न पहचान सका। वह निराश हो सोचने लगा-"अरे, फिर कहाँ आ पड़ा हूँ? यहाँ किस तरह के आदमी रहते हैं? कहीँ वे क्रूर व नरभक्षक तो नहीं हैं? मेरे साथ ये सब चीजें क्यों हैं? इन्हें कहाँ रखूँ? महामेधी ने मेरी पूरी तरह सहायता न की। मुझे इथाका छोड़ आने का वचन दिया था। अब ये लोग मुझे कहीं छोड़कर चले गये हैं।

उसने अपनी चीजें देखीं। एक भी चीज़ न गई थी। वह अपने देश के बारे में सोचता चहलकदमी कर रहा था कि उस तरफ एक नौजवान गड़रिया आया। रूपधर की जान में जान आई। उसने नौजवान के पास जाकर कहा-"अरे भाई, भगवान की तरह आये हो, तुम्हें ही मेरी मदद करनी होगी। सच बताना, झूठ मत कहना, इस देश का नाम क्या है?



यहाँ किस प्रकार के मनुष्य रहते हैं?"

गड़रिये ने कहा-"आपको लगता है, दुनियाँ का ज्ञान कम है और नहीं तो आप किसी दूर देश के होंगे। क्योंकि हमारा देश कोई ऐसा वैसा देश नहीं है, जिसका कोई नाम वगैरह न हो। इथाका देश के बारे में तो ट्रोय नगर में भी कहा सुना जाता है।"

रूपधर बहुत खुश था। वह मन ही मन यह जानकर फूला न समाता था कि वह इथाका पहुँच गया था। पर उसने वह



आनन्द व्यक्त न होने दिया-"हाँ, हाँ! कीट देश में, इस देश के बारे में मैंने सुना था। मुझे भाग कर आना पड़ा, क्योंकि मैंने एक दुष्ट का खातमा कर दिया था।" उसने यह कहकर एक झूठमूठ कहानी गड़रिये को सुनाई।

वह बात कर ही रहा था कि गड़रिया गायब हो गया और उसकी जगह बुद्धिमति दिखाई दी। उसने हँसते हुए कहा-"तुमसे अधिक चालाक कोई नहीं है। कितनी आसानी से कहानियाँ गढ़ते हो, अपने देश जाने पर तुम्हारी पुरानी आदत न गई। पर मुझमें भी थोड़ी बहुत अक्ल है। मेरे पास तुम्हारी चालें नहीं चल सकती। असली बात यह है कि जैसे तैसे तुझे स्वदेश तो ले आई हूँ, पर अभी तेरे कष्ट खतम नहीं हुए हैं। इसलिए किसी को न मालूम हो कि तुम वापिस आ गये हो। सावधान!"

"माँ, क्या सचमुच यह मेरा देश इथाका ही है? मैं विश्वास नहीं कर पा रहा हूँ। कहीं तुम मेरा परिहास तो नहीं कर रही हो?" रूपधर ने पूछा।

"तुम तो किसी का भी देखते देखते विश्वास नहीं कर सकते। और कोई होता तो इतने दिनों बाद स्वदेश लौटते ही अपनी स्त्री बच्चों के विषय में पूछता। परन्तु तुझे मुझ पर ही विश्वास नहीं है। हाँ, यह एक तरह से अच्छा ही है। तेरी पत्नी तेरे लिए दिन रात तड़प रही है। पहले तुझे तेरा देश दिखाता हूँ, पहचानो।" बुद्धिमति ने यह कहते हुए कोहरा हटा दिया।

तुरन्त रूपधर ने वे सब निशानियाँ पहचानी, जिनको वह पहले ही जानता था। फिर बुद्धिसति गुफा में चली गई और उसने रूपधर को ऐसी जगह

दिखाई, जहाँ वह अपनी चीजें रख सकता था। फिर उन्होंने एक पत्थर रखकर गुफा बन्द कर दी। वे बैठकर बातचीत करने लगे।

"रूपधर! तीन साल से कुछ दुष्ट तुम्हारे घर धरना दिये बैठे हैं। तेरा धन खा रहे हैं, तेरी पत्नी को शादी करने के लिए सता रहे हैं। इन दुष्टों की खबर लेना तेरे जिम्मे है। तेरी पत्नी उनको इधर उधर की खबरें सुनाती तेरा इन्तजार कर रही है ताकि इस बीच उनको गुस्सा न आ जाये।" बुद्धिमति ने कहा।

"माँ, यदि तेरी कृपा बनी रही तो मैं उनको मार दूँगा। बताओ, क्या करूँ?" रूपधर ने पूछा।

"पहले तेरा रङ्ग रूप बदल देती हूँ ताकि तुझे कोई न पहचाने। तेरी पत्नी और तेरे लड़के को भी तुझे नहीं पहचानना चाहिये। तू सूअरों की रखवाली करनेवाले अपने नौकर के पास रह। सूअरों को वह कौवों के टीले पर चरा रहा है। इस बीच मैं तेरे लड़के धीरमति को तेरे घर पहुँचाता हूँ। तेरा कुशल समाचार जानने के लिए वह इस





समय राजा के पास गया हुआ है।" बुद्धिमति ने कहा।

इसके बाद उसने रूपधर को इस तरह बदल दिया कि वह बहुत बूढ़ा लगने लगा। उसकी चमड़ी पर झुर्रियाँ पड़ गई। उसने उसको एक डण्डा और थैला दिया। रूपधर को कौवों के टीले का रास्ता बताकर बुद्धिमति अन्तर्धान हो गई।

रूपधर पहाड़, जङ्गलों को पारकर उस जगह पहुँचा। वहाँ उसके सूअरों का रखवाला था। रूपघर के नौकरों में यह ही सबसे अधिक स्वामिभक्त था। उसने एक बड़े मैदान में अपने और सूअरों के लिए एक मकान बना रखा था। उसके चारों और पत्थर की दीवार थी। उसके पास हजार सूअर थे। रूपधर के घर में धरना दिये हुए दुष्टों ने तभी बहुत से सूअरों को मँगाकर खा लिया था। सूअरों की रखवाली करने के लिए चार शिकारी कुत्ते भी थे।

रूपधर जब वहाँ पहुँचा तो सूअरों का रखवाला घर के बाहर बैठा अपने लिए चप्पल तैयार कर रहा था। रूपधर को देखते ही शिकारी कुत्ते भोंकते भोंकते उसकी ओर लपके। रूपधर ने झट अपने हाथ का डण्डा फेंक दिया और जमीन पर लेट गया। इतने में उसका नौकर दौड़ता आया। उसने कुत्तों को अलग कर दिया। "अरे, बूढ़े! थोड़ी देर और होती तो कुत्ते तुम्हें हजम कर लेते। मेरी जिन्दगी तो यूँहि बिगड़ी हुई है। मेरा भलामानस मालिक खाने-पीने के लिए तड़पता-तड़पता देश देश में धूम रहा है और ये कम्बख्त मोटे-मोटे सूअर काटकर खा रहे हैं। अन्दर आओ, कुछ खाओ। फिर अपनी कुछ कहना।"

रूपधर भोजन करता रहा और सूअरों की रखवाली करनेवाला अपने मालिक के गुण-गान करता रहा- कैसे वह राजा के साथ युद्ध के लिए गया था। जाने वह किधर चला गया था कि उसके बारे में कुछ न मालूम था।

सब सुन रूपधर ने कहा-"अरे भाई, अपने मालिक के बारे में इतना बढ़ा-चढ़ाकर कह रहे हो, कौन है वह? मैं बहुत देश घूमा फिरा हूँ। अगर वह कहीं दिखाई दिया होगा तो जरूर बताऊँगा।"

यह सुन नौकर ने कहा-"तू हजार कह पर न मालकिन न उनके लड़के तेरा विश्वास करेंगे। कितनों ने कितनी ही बातें कहीं पर सब झूठी निकलीं। अगर तुम भी कुछ खाना-पीना चाहते हो तो तुम भी झूठी मूठी दो-चार खबरें सुना देना।"

"खाने-पीने के लालच में झूठ कहना बहुत नीच काम है। मैं शपथ खाकर सच कहता हूँ। सुनो। अमावस के जाने से पहले तेरा मालिक वापिस आ जायेगा। उसके शत्रुओं की हार निश्चित है। अब मुझे किसी इनाम की जरूरत नहीं है, जब मेरी बात ठीक निकले तभी देना।" रूपधर ने कहा।



"अरे, पागल! अब वे कब आयेंगे। वे तो कभी के चले गये। अगर वे आ गये तो उनकी पत्नी और लड़के को और क्या चाहिये। बड़ा अच्छा लड़का है, पिता की तरह उसका भी पालन-पोषण हुआ है। जानते हो वह कितना खूबसूरत है!" नौकर ने कहा।

फिर दोनों में बहुत देर तक बातचीत चलती रही। रूपधर ने अपने विषय में यह कहा कि वह ग्रीक देश का रहनेवाला था। ट्रोय नगर के युद्ध में उसने हिस्सा लिया था। उसने यह भी बताया कि

वापसी रास्ते में उसको रूपधर कहीं दिखाई दिया था। परन्तु सूअरों की रखवाली करनेवाले को विश्वास न हुआ।

अन्धेरा होने से पहले सूअरों का रखवाला सूअरों को हाँक लाया। उस दिन रात को अपने अतिथि के लिए उसने अच्छा भोजन तैयार किया।

बाहर वर्षा शुरु हो गई। ठण्डी हवा चलने लगी। रूपधर को ठण्ड लगी। उसने सूअरों की रखवाली करनेवाले से कहा-"जानते हो, ट्रोय नगर के युद्ध में एक बार क्या हुआ? हमारे कुछ आदमी ट्रोय नगर की दीवारों के नीचे पहरा देने के लिए गये और पेड़ों के नीचे सो गये। उस दिन भी इस तरह ठण्डी हवा चल रही थी और ओस गिर रही थी। मेरे पास ही ओढ़ने के लिए कुछ न था। एक दिन रात को मैने रूपधर को उठाया और उससे अपनी हालत कही। उसने कहा कि तभी उसने एक बुरा सपना देखा था। राजा के पास जाकर कुछ और मनुष्यों को उसने बुलाकर लाने को कहा। इसलिए एक उठा और अपना कम्बल वहाँ छोड़कर जहाजों की ओर गया। तुरन्त मैने वह कम्बल ले लिया और उसे ओढ़कर रात काट दी।"

"बूढ़े, तूने अच्छी कहानी सुनाई। आज रात तुझे ओढ़ने के लिए कुछ न कुछ मिलेगा ही।" सुअरों की रखवाली करनेवाले ने कहा।

अलाव के पास चमड़े का बिछौना बिछा दिया और उस पर रूपधर को लिटा दिया। सूअरों की रखवाली करनेवाले ने उस पर मोटा कम्बल ओढ़ दिया। उस गरम बिछौने पर रूपधर आराम से रात भर सोता रहा।

(अभी और है)



# अच्छा हुआ

एक दिन एक किसान ने जमीन्दार को देखने के लिए जाते हुए अपनी पत्नी से कहा-" जमीन्दार साहब को बेल दूँगा, जरा उन्हें एक टोकरे में रख देना।"

"उनके लिए बेल क्यों अञ्जीर खूब फली हैं। उन्हें दे देना। खायेंगे।" यह कहकर किसान की पत्नी ने टोकरी भर अञ्जीर उसे दे दी।

किसान जब जमीन्दार के घर गया तो जमीन्दार वरान्दे में कुर्सी पर बैठा हुआ था। किसान, अञ्जीर की टोकरी उसके सामने रखकर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

जमीन्दार ने टोकरे का ढ़कन खोला, अञ्जीर देखी तो उसने एक उठाई और जोर से किसान पर मारी। अञ्जीर के सिर पर पड़ते ही किसान ने कहा-"अच्छा हुआ।"

जमीन्दार ने लगभग सारी अञ्जीरें किसान के सिर पर मारी और हर बार किसान कहता "अच्छा हुआ।" यह सुन जमीन्दार को अचरज हुआ।

"मैं तुझे अञ्जीरों से मार रहा हूँ और तुम कहते हो 'अच्छा हुआ!'"

"मैं पहले बेल लाना चाहता था। मेरी पत्नी ने कहा बेल नहीं, अञ्जीर ले जाओ। किस्मतवाला हूँ। नहीं तो सिर फूट जाता। अच्छा ही हुआ।" किसान ने कहा।



CHANDAMAMA (Hindi) MAY 1958 Regd. No. M. 5452

